तात्पर्य

अपने को ही सब कुछ समझ कर आसुरी मनुष्य शास्त्रों और सत्पुरुषों की उपेक्षापूर्वक नाममात्र के धार्मिक अथवा याज्ञ कर्म करते हैं। वे किसी में पूज्यभाव नहीं रखते; उनका व्यवहार बड़ा ही अशिष्ट होता है। इसका कारण धन और मान से होने वाली मोहांधता है। ये असुर कभी-कभी दम्भपूर्वक धर्मोपदेशक का वेष बना कर लोगों को सन्मार्ग से भ्रष्ट करते हैं। दुर्भाग्यवश ऐसे धर्मध्वजियों को बहुधा सन्त अथवा अवतार समझ कर पूजा जाता है। वे नाममात्र के यज्ञों से यजन करते हैं, देव-पूजन करते हैं अथवा अपने ही ईश्वर की कल्पना कर लेते हैं। सामान्य मनुष्य भी उन्हें ईश्वर मानकर पूजते हैं। मूर्खों द्वारा ऐसे मनुष्य धर्म अथवा ज्ञान में उन्नत समझे जाते हैं। संन्यास के वेष की आड़ में नाना प्रकार का दुराचार करते हुए ये संन्यासी के लिए विहित विधान की बिल्कुल उपेक्षा कर देते हैं। समझते हैं कि अपनी कल्पना के अनुसार किसी मार्ग पर चला जा सकता है, क्योंकि ऐसा कोई आदर्श-मार्ग नहीं है, जो सब के लिए अनुसरण के योग्य हो। **अविधिपूर्वकम्** शब्द का विशेष अभिप्राय है। वास्तव में इस सम्पूर्ण दुराचरण का कारण अज्ञान और मोह है।

अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः।।१८।।

अहंकारम् =मिथ्या अभिमान ; **बलम्** =बल; **दर्पम्** =घमण्ड; **कामम्** =काम; **क्रोधम्** =क्रोध के; **च** =तथा; **संश्रिताः** =परायण; **माम्** =मुझ से; **आत्मपरदेहेषु** =अपने और दूसरों के शरीर में स्थित; **प्रद्विषन्तः** =द्वेष करते हैं; **अभ्यसूयकाः** =ईर्ष्यालु।

अनुवाद

मिथ्या अहंकार, बल, घमण्ड, काम और क्रोध से मोहित हुए असुर सच्चे धर्म की निन्दा करते हुए अपने और दूसरों के शरीर में स्थित मुझ परमेश्वर से द्वेष करते हैं।।१८।।

तात्पर्य

भगवान् की प्रभुसत्ता के विरोधी आसुरी मनुष्य को शास्त्रों में विश्वास करना अच्छा नहीं लगता। वह शास्त्रों और श्रीभगवान् दोनों के अस्तित्व से ईर्ष्या करता है। इसका कारण है तथाकथित मान और धनबलादि का संग्रह। वह नहीं जानता कि पुनर्जन्म इस जीवन पर निर्भर करता है। यह न जानते हुए वह दूसरों और अपने आत्मा के साथ तक द्वेष कर बैठता है। दूसरों के शरीर के साथ अपने शरीर की भी हिंसा करने में वह संकोच नहीं करता; ज्ञान के अभाव में श्रीभगवान् के परमेश्वरत्व की सर्वथा अवहेलना कर बैठता है। इस प्रकार शास्त्रों और भगवान् के प्रति ईर्ष्या भाव से भरा असुर श्रीभगवान् के अस्तित्व के विरुद्ध मिथ्या तर्क रखता है और शास्त्रों के अधिकार को चुनौती देता है। वह समझता है कि वह स्वेच्छाचार करने में स्वतन्त्र और समर्थ है। सोचता है कि बल, शक्ति और धन में उसका सामना करने